सूर्य की अंतिम किरण से
सूर्य की पहली किरण तक

सूर्य की अंतिम किरण से
सूर्य की पहली किरण तक

राधाकृष्ण प्रकाशन

कैरोलिन व मख्ता को
ब्लैक दिसम्बर की स्मृति मे

निदेशक का वक्तव्य

रामगोपाल बजाज

नाटक के प्रकाशन में यानी प्रस्तुत हो चुकने के बाद, किताब-सा छपने के पहले और नाटककार के अपने सृजनात्मक समार से निकलने के बाद नाटक एक निदेशक अभिनेता, शिल्पी आदि के निजी और सामूहिक सृजन प्रक्रिया से होकर ही मच पर दिखता है। और ठीक जिस समय वह दीख रहा होता है तब भी देखने वालों और करने वालों के बीच एक लगातार लेन-देन का व्यापार चलता रहता है। यह व्यापार हर निदेशक, अभिनेता, मण्डली, दर्शक और यहां तक कि एक प्रदर्शन से दूसरे प्रदर्शन तक मे भी होते हुए नाटक को बदलता रहता है।

इसीलिए छपते नाटक मे होते नाटक की बात और होने के क्रम मे गुजरी प्रक्रिया और अनुभव की बात करने का मौका मिला तो सोचने लगा यह नाटक मैंने कैसे चुना। सर्वप्रथम 'दिशान्तर' ने सुरेन्द्र वर्मा का नाटक 'द्रौपदी' प्रस्तुत किया था— तब से मेरे मन मे सुरेन्द्र के अन्य नाटक पढ़ने करने की बान थी। एक दिन सुरेन्द्र ने अपने एक नाटक का शीर्षक-भर बताया—

सूर्य की अंतिम किरण से
सूर्य की पहली किरण तक

इतना लम्बा नाम ! 'सूर्य' शब्द के दुहराये जाने मे वक्तव्य का बलपूर्ण आग्रह लगा। काव्यात्मकता अपनी जगह।

इन दोनों पंक्तियो को गौर से देखें तो गणितात्मक आवृत्ति और एक चौरसपना है वाक्य के स्वरूप मे, जबकि ध्वनि और अर्थ मे काव्यात्मकता है। वैसे तो 'बात एक रात की' कहा जा सकता है। रात के बोझिल अंधकार, और रात के साथ जुड़ी दूसरी ध्वनि यौन-बिम्ब धारण करती है। सारे नाटक को मैं करने के

उसी मध्य बिन्दु पर महत्त्वपूर्ण नाटकीय क्षण लाये गये। इसमें दर्शकों
अंतर में सारे पात्रों का एक अदृश्य सूई से बींधने का उद्देश्य रहा।
आज के काल का अधिकेन्द्र भाग रखते हुए एक तिरछी मज़बूत लकीर मध्य ।
ती है। चंदा सारे मध्य के लगभग केन्द्र में है। (पूर्णीत अहमद इसके मध्य-
अर्ध-बिन्दी हैं) सारा मध्य दो त्रिकोणों में बँटा है, इस तरह दो से अधिक
ओं के अन्दर उनके स्थिति-बिन्दुओं से रेखाएँ खींचें तो अनगिनत त्रिकोण बनाते
ते जाते हैं। बकाम की ऐंठन को व्यक्त करने के लिए अपने स्थान पर ही गोल
सी गतियाँ और अनिश्चित दिशा में बढ़ते कदम। एक उदाहरण ओकवाक
द्वारिका का 'कौटिल्य न रावा' के लिए रात को आठ भागों बाँटा है।' बढ़ते
मय अभिनेता अपने ही स्थान पर गोल घूमने लगता है और फिर वह चक्कर
ड़ा वह चर फैलने लगता है--वह उसी गति से चलता और घूमता जाता
और फिर एकाएक अनिश्चितापूर्वक उस नियत रेखा-वृत्त से निकल मध्य के
न बिन्दुओं की ओर जाता है जिनसे उसका दैनिक अभ्यास-संबंध है पर आज हर
न्दु पर अनजान, अनिश्चित-सा घूमता चला जाता है—घूमने में अभी तक
नाई है और फिर झटके के साथ उस आक्रोश से सपाट कोणात्मक यात्रा करने
गता है--किन्तु जाने का मध्य-बिन्दु निश्चित अभी तक नहीं क्योंकि उसकी
जीवन-यात्रा भी इतनी ही अनिश्चित और कोणात्मक होती जाती है।

काल-विशेष से बढ़ कर नाटक विषय की दृष्टि से ही हमसे संबंध जोड़ता है।
विशेषकर इसमें नाटककार ने एक काल-खण्ड में कथा का आधार डाल कर पात्रों
को गरिमा देने का प्रयास किया है जो आज के जीवन में व्यक्तित्व के स्तर पर कम
रह गया है क्योंकि रोज़ी की समस्या ने आदमी को बहुत ओछे स्तर पर जीने को
मजबूर किया है। फिर भी स्त्री-पुरुष की परस्पर अपूर्णता और पूरकता की ग्रन्थि
जितनी ही जटिल, शाश्वत प्रश्न है उतनी ही सरल भी। तादात्म्य होता ही है।
कुछ दृश्यों को मैंने छिप कर देखा, जैसे आरम्भ में उन्हें नाटक की स्थिति में
संकोच रहा और क्रमशः वही महोदया शीलवती के संग तीसरे अंक में अपनी कुर्सी
से मुद्रा और भंगिमा द्वारा चुप किन्तु सक्रिय आक्रोश व्यक्त कर रही थीं। काल-
खण्ड को, वहीं फिर से टूट कर एक होने की प्रक्रिया देखी गयी— संतोष हुआ।
इसलिए इसलिए हमारे पात्र विशेष व्यक्ति न होकर क्रमशः मात्र स्त्री और पुरुष
बन गये। काल और वस्त्र और भाषा एक बार बहाना बनी, फिर टूटती चली
गयी।

शीलवती का अन्तिम वाक्य है— जब आत्मसंतोष की अंधी दौड़ हो व्यक्तिगत
सुख की खोज – तो जीवन बहुत कठिन हो जाता है, ओक्काक !

यहाँ एक भ्रांति हो सकती है कि क्या नाटककार एक से अधिक पुरुष को या
एक से अधिक व्यक्ति की पूर्ति के लिए आवश्यक मानना नीति-संगत मनवाना

क्रम

निर्देशक का वक्तव्य ७

अंक १ : १३

अंक २ ३२

अंक ३ ४६

अंक १

राजप्रासाद का शयनकक्ष। मंच की अगली सीमा पर दाईं और बाईं ओर एक-एक द्वार। दाईं के बाद मदिराकोष्ठ, बाईं के बाद चौकी पर दर्पण एवं प्रसाधन-सामग्री, सामने आसंदी। बाईं ओर बड़ा गवाक्ष, दाईं तथा सामने की दीवार के लगभग मध्य भाग से लेकर दोनों (दीवारों) के सम्मिलन तक। मंच के बीचों-बीच ऊपर से लटकता मुक्ताझालर। सामने की दीवार के पास शैया। कुछ आसन एवं चौकियाँ।

नेपथ्य से धीमी उद्घोषणा। धीरे-धीरे प्रकाश होता है। नेपथ्य में मंगलवाद्य-ध्वनि, जो क्रमशः बहुत मंद हो जाती है। महत्तरिका, प्रमुख प्रतिहारी का प्रवेश। यों ही एकाध जगह ठिठकती है। एकाध वस्तु को सहेजती है। गवाक्ष तक आकर बाहर देखने लगती है। दूसरी प्रतिहारी का प्रवेश।

प्रतिहारी — महत्तरिका! यहाँ क्यों चली आयी हो?

महत्तरिका — (गहरी साँस लेकर) मुझसे सहन नहीं हो रहा है यह शृंगार इसलिए।

प्रतिहारी — कपोलों पर विशेषक कौन बनायेगा? तुम्हारे जैसा सधा हाथ तो किसी का नहीं।

महत्तरिका — तू बना दे।

(विराम।)

प्रतिहारी — क्या बताना है? स्मरण है क्या? अभी महादेवि से पूछा, कोई उत्तर ही नहीं मिला। वे तो जैसे बिलकुल जड़ हो गयी

हैं। न उन तक कोई बात पहुँचती है, न उन पर कोई प्रतिक्रिया होती है।

महत्तरिका · कुछ भी बना दे। क्या अन्तर पड़ता है!

प्रतिहारी · (कुछ रुक कर) अभी मैंने महामात्य, राजपुरोहित और महाबलाधिकृत को भीतर आते हुए देखा है। ..महाराज को उद्यान से हटा लो न! जिस मन स्थिति में वे हैं, उसमें इन लोगों से सामना नहीं होना चाहिए।

महत्तरिका (फीकी मुस्कान से) कोई कुछ नहीं कर सकता, बावली ..! अगर किसी का बस चलता, तो ऐसी अनहोनी होती ही क्यों!

विराम।

प्रतिहारी (कुछ भेद भरे स्वर में) एक बात बताऊँ?

महत्तरिका (प्रतिहारी की ओर देखती है।) क्या?

प्रतिहारी (कुछ रुक कर) तुम तो महादेवि को बचपन से जानती हो। .. क्या यह सच है कि महाराज से ब्याह होने से पहले महादेवि किसी की वाग्दत्ता थी?

महत्तरिका हाँ।

प्रतिहारी कौन थे वे?

महत्तरिका उन्हीं के जैसे एक दरिद्र युवक नाम था प्रतोष लेकिन अब दरिद्र नहीं हैं। बहुत बड़े व्यापारी हो गये हैं।

प्रतिहारी रहते कहाँ हैं?

महत्तरिका पास ही अवन्ती में लेकिन यहाँ भी उनका एक प्रासाद है। (क्षणिक विराम) क्यों? क्या हुआ?

प्रतिहारी कंचुकी ने मुझे बताया है कि ...।

महत्तरिका (सजग होकर) क्या?

प्रतिहारी आज दोपहर को वह उस भवन से निकला था, तो उस भवन में आह-वाह हो रही थी। उसने पूछा, तो बताया गया कि गृह-स्वामी मर रहे हैं।

महत्तरिका आह!

सोचती-सी रह जाती है। दोनों एक-दूसरे की ओर देखती हैं। क्षणें द्वार पर आहट।

प्रतिहारी (उस ओर देखते हुए) महामात्य!

प्रतिहारी का तनिक नमन करते हुए प्रस्थान। महामात्य का प्रवेश।

दूसरे की अन्तिम किरण व दूसरे की पहली किरण पर

महामात्य : महत्तरिका !

महत्तरिका : श्रीमान !

महामात्य : (दाएँ-बाएँ देखते हुए) महाराज ?

महत्तरिका : उद्यान में हैं।

महामात्य : उनकी मनःस्थिति कैसी है अब ?

महत्तरिका : सारी रात सोए नहीं। चिन्तित-से टहलते रहे। अन्न का एक दाना मुँह में नहीं गया।

विराम।

महामात्य : महादेवि ?

महत्तरिका : (उदास मुस्कान से) छः रातों की तरह कल रात भी उनकी आँख नहीं लगी। शैया पर करवटें बदलती रहीं।

महामात्य : (कुछ रुक कर) उन्हें शृंगार किया गया ?

महत्तरिका : अनुलेपन और स्नान हो चुका है। शृंगार चल रहा है।

महामात्य : क्या पहनाया जा रहा है उन्हें ?

महत्तरिका : वही, जो आपकी आज्ञा थी।

महामात्य : जयमाला गूँथी जा चुकी है ?

महत्तरिका : हाँ, महोदय !

विराम।

महामात्य : आज सारी रात तुम महाराज के साथ रहना। उनका मन बहुत अस्थिर है। कहीं कुछ कर बैठें !

महत्तरिका : जो आज्ञा !

महामात्य का प्रस्थान। महत्तरिका फिर गवाक्ष के सम्मुख आ जाती है। वाद्य-ध्वनि की ऊँची-नीची लय। ओक्काक महाराज का निःशब्द प्रवेश। कुछ क्षणों महत्तरिका की ओर देखता रहता है।

ओक्काक : महत्तरिका !

महत्तरिका : (चौंक कर) ओह महाराज !

ओक्काक : (हल्की मुस्कान से) क्या देख रही हो इतनी डूबी हुई ? सुध-बुध भूल कर ? (महत्तरिका सिर झुका लेती है।) बोलो न ? कुछ मुझे भी बताओ। (विराम) महत्तरिका !

महत्तरिका : (गहरी साँस लेकर) देख रही थी नीचे मंडप की ओर ।

ओक्काक : कैसा बना है ?

महत्तरिका : बहुत कल्पनाशील !

विराम।

हैं। न उन तक कोई बात पहुँचती है, न उन पर कोई प्रतिक्रिया होती है।

महत्तरिका कुछ भी बना दे। क्या अन्तर पड़ता है!

प्रतिहारी (कुछ रुक कर) अभी मैंने महामात्य, राजपुरोहित और महाबलाधिकृत को भीतर आते हुए देखा है। महाराज को उद्यान से हटा लो न। जिस मन स्थिति में वे हैं, उसमें इन लोगों से सामना नहीं होना चाहिए।

महत्तरिका (फीकी मुस्कान से) कोई कुछ नहीं कर सकता, बावली ..! अगर किसी का बस चलता, तो ऐसी अनहोनी होनी ही क्यों!

विराम।

प्रतिहारी (कुछ भेद भरे स्वर में) एक बात बताऊँ?

महत्तरिका (प्रतिहारी की ओर देखती है।) क्या?

प्रतिहारी (कुछ रुक कर) तुम तो महादेवि को बचपन से जानती हो। .. क्या यह सच है कि महाराज से ब्याह होने से पहले महादेवि किसी की वाग्दत्ता थीं?

महत्तरिका हाँ।

प्रतिहारी कौन थे वे?

महत्तरिका उन्हीं के जैसे एक दरिद्र युवक नाम था प्रतोष लेकिन अब दरिद्र नहीं हैं। बहुत बड़े व्यापारी हो गये हैं।

प्रतिहारी रहते कहाँ हैं?

महत्तरिका पास ही, अवंती में लेकिन यहाँ भी उनका एक प्रासाद है। (क्षणिक विराम) क्यों? क्या हुआ?

प्रतिहारी कंचुकी ने मुझे बताया है कि ।

महत्तरिका (सजग होकर) क्या?

प्रतिहारी आज दोपहर को वह उस रास्ते निकला था, तो उस भवन में झाड़-पोंछ हो रही थी। उसने पूछा ... [illegible] या गया ... स्वामी आ रहे हैं।

महत्तरिका ओह...!

सोचती-सी [illegible]
देखती हैं।

प्रतिहारी : (उस ओर देखते [illegible]

[illegible]

सूर्य की अंतिम [illegible]

का : (एकटक देखता है।) हाँ, महाराज ?

ाक (कुछ ठहर कर, हल्की मुसकान से) कुछ याद ही नहीं आता। . अभी यही जानने का प्रयास कर रहा था कि वर्ष कौन-सा है तो कुछ हिसाब ही नहीं बना। संवत की संख्या की जगह महीनों के नाम आ गये। फिर उन नामों के स्थान पर तिथियों का क्रम पहुँचा। फिर उस क्रम की बजाय हथेलियों से माथा ठोकता है, जैसे स्मृति के द्वार रहा हो।)

रिका (विह्वल होकर) आप बहुत थकते हैं, महाराज ! विश्राम की आवश्यकता है—निद्रा की, तन्द्रा की, की ।

काक (आवेग से) कैसे मिले यह निद्रा ? यह विस्मरण ? जब तक यह कक्ष है, जब तक यह शरीर है ,जब तक यह जीवन है (बाएँ द्वार पर कुछ आहट। बिना मुड़े) ..कौन है वहाँ ?

महामात्य, राजपुरोहित एवं महाबलाधिकृत का प्रवेश। महत्तरिका का प्रस्थान।

क्काक (वितृष्णा से) तो आप लोग हैं ओक्काक की स्वामिभक्त त्रिमूर्ति कहिये, अब क्या आज्ञा है ?

विराम।

ामात्य हम कैसे आपको अपनी निश्छलता का विश्वास दिलायें ?

रोहित हम जो कुछ भी कह रहे हैं, केवल राज्य के हित के लिए।

धिकृत इसके अतिरिक्त और कोई भावना नहीं है।

विकाक (व्यंग्य से) इसमें कौन संदेह कर सकता है !

हामात्य (कुछ रुक कर) आप अच्छी तरह जानते हैं मल्ल राज्य की परम्परा को कि शासनकाल के पाँच वर्ष पूरे होते ही उत्तराधिकारी की घोषणा कर दी जाती है। आपके ब्याह और सिंहासनारोहण को इतना समय हो चुका है, लेकिन अभी तक कोई संतान नहीं हुई।

पुरोहित और आपके लगातार एक मास तक शैयाग्रस्त रहने के कारण प्रजा के मन में यह डर समा गया है कि . ।

ओक्काक · लेकिन वह मामूली-सा ज्वर था। अब तो मैं पूरी तरह स्वस्थ हूँ, हृष्टपुष्ट हूँ । क्या मुझे देख कर कह सकता है कोई कि मेरे जीवन के दिन थोड़े रह गये हैं ?

ओक्काक : (आवेश में) लेकिन यह ऐसी कमी नहीं है, जो . (कह नहीं पाता। उन लोगों की ओर पीठ कर आगे बढ़ जाता है। विवश रोष में लंबी साँसें लेता है।) यह सबसे कोमल मर्मबिन्दु से जुड़ी है ..आत्मसम्मान के साँस जैसे सूक्ष्म और जीवित तार से ...(आरोप की दृष्टि से देखता है।) लेकिन आप नहीं समझेंगे। ..आप लोग पुरुष हैं न ..संपूर्ण पुरुष !

महाबलाधिकृत : अपने इस दुख में आप अकेले नहीं है, महाराज !

राजपुरोहित हम भी शासन-तंत्र के मंत्र हैं—आपसे जुड़े हुए।

महामात्य अंधकार के इन क्षणों के हम भी भागीदार हैं।

ओक्काक (बिफर कर) नहीं है .अगर होते, तो ऐसा उठाने का पागलपन आप नहीं करते . केवल चर्चा के लिए, दूसरों के मूल्य पर नेता बनने की महत्वाकांक्षा में ।

महामात्य यह पग उतना क्रांतिकारी नहीं है, जितना कि आप समझ रहे हैं। आजकल भी नियोग की प्रथा है। दो वर्ष पहले कुंडिनपुर और तीन वर्ष पहले अवंती राज्यों में इसी प्रकार उत्तराधिकारी प्राप्त किया गया है।

महाबलाधिकृत इन दोनों ही राज्यों की महिषियाँ गर्भप्राप्ति के लिए धर्मनटी बन कर बाहर गयी थीं।

ओक्काक (दोनों कानों पर हाथ रख कर, ऊँचे स्वर में) मत बोलिये मेरे सामने यह शब्द ! मुझे इस शब्द से घृणा है धर्मनटी !

राजपुरोहित (ओक्काक की प्रतिक्रिया से अप्रभावित) और इतिहास साक्षी है कि हमारे देश में प्राचीन काल से ही यह रास्ता अपनाया गया है। एक-एक पांडव का जन्म नियोग के द्वारा ही हुआ था—उनमें से कोई भी अपने पिता की संतान नहीं था।

महामात्य : (अर्थपूर्ण स्वर में) और जब तक आदमी आदमी है, यह प्रथा जीवित रहेगी।

ओक्काक क्या मतलब ?

विराम।

महामात्य · क्या प्रमाण है इस बात का कि हम चारों जो यहाँ खड़े हैं, अपने-अपने पिता के पुत्र हैं ? हो सकता है कि मेरा वास्तविक पिता वह शिक्षक हो, जो मेरी माँ को संस्कृत पढ़ाने आता था। . क्या इस बात की संभावना नहीं है कि (संकेत सहित) महाबलाधिकृत के पिता सही मानों में चक्रपुर के मंडलेश्वर हों, जो यहाँ राजधानी में रहते समय (एक-एक शब्द अलग

ओक्काक : (आवेश में) लेकिन यह ऐसी कमी नही है, जो .(कह नहीं पाता। उन लोगों की ओर पीठ कर आगे बढ़ जाता है। विवश रोष मे लबी साँसें लेता है।) यह सबसे कोमल मर्मबिन्दु से जुड़ी है. आत्मसम्मान के साँस जैसे सूक्ष्म और जीवंत तार मे ...(आरोप की दृष्टि से देखता है।) लेकिन आप नही.. समझेंगे। . आप लोग पुरुष है न. संपूर्ण पुरुष !

बलाधिकृत . अपने इस दुख मे आप अकेले नही है, महाराज !

जपुरोहित हम भी शासन-तंत्र के मंत्र हैं—आपसे जुडे हुए।

महामात्य . अंधकार के इन क्षणो के हम भी भागीदार हैं।

ओक्काक (बिफर कर) नहीं हैं. .अगर होते, तो ऐसा क्रांतिकारी पग उठाने का पागलपन आप नही करते ..केवल चर्चा और प्रचार के लिए, दूसरो के मूल्य पर नेता बनने की महत्वाकांक्षा मे ।

महामात्य यह पग उतना क्रांतिकारी नही है, जितना कि आप समझ रहे हैं। आजकल भी नियोग की प्रथा है। दो वर्ष पहले कुहिनपुर और तीन वर्ष पहले अश्मती राज्यो मे इसी प्रकार उत्तराधिकारी प्राप्त किया गया है।

बलाधिकृत इन दोनो ही राज्यो की महिषियाँ गर्भप्राप्ति के लिए धर्मनटी बन कर बाहर गयी थी।

ओक्काक (दोनों कानों पर हाथ रख कर, ऊँचे स्वर मे) मत बोलिये मेरे सामने यह शब्द ! . .मुझे इस शब्द से घृणा है धर्मनटी !

राजपुरोहित . (ओक्काक की प्रतिक्रिया से अप्रभावित) और इतिहास साक्षी है कि हमारे देश मे प्राचीन काल से ही यह रास्ता अपनाया गया है। एक-एक पाडव का जन्म नियोग के द्वारा ही हुआ था—उनमे से कोई भी अपने पिता की संतान नही था।

महामात्य : (अर्थपूर्ण स्वर मे) और जब तक आदमी आदमी है, यह प्रथा जीवित रहेगी।

ओक्काक ' क्या मतलब ?

विराम।

महामात्य . क्या प्रमाण है इस बात का कि हम चारो जो यहाँ खड़े है, अपने-अपने पिता के पुत्र हैं ? हो सकता है कि मेरा वास्तविक पिता वह शिक्षक हो, जो मेरी माँ को संस्कृत पढ़ाने आता था।.. क्या इस बात की संभावना नहीं है कि (संकेत सहित) महाबलाधिकृत के पिता मही मानो में चक्रपुर के महलेश्वर हों, जो यहाँ राजधानी मे रहते समय (एक-एक शब्द अलग

लगाये है ?

महाबलाधिकृत : इसका मतलब यह हुआ कि आप गुप्तचरों की बातों पर भी ध्यान नहीं दे रहे हैं। क्या मैंने आपको सेवा में यह सूचना नहीं पहुँचायी थी कि (दायाँ हाथ उठा कर) इस ओर वत्स और (बायाँ हाथ उठाकर) उस ओर वल्लभ राज्य के शासकों ने आपस में षड्यन्त्र किया है कि मल्ल राज्य पर आक्रमण करें और हमारी सारी धन-संपत्ति लूट लें ?

ओक्काक : लेकिन यह तब की बात है, जब मैं रोगग्रस्त था। अब पूरी तरह ।

महामात्य : पर राजधानी के बाहर कितने लोग यह जानते हैं कि अब पूरी तरह रोगमुक्त है ? क्या गुप्तचर एक के बाद एक लगातार यह सूचना नहीं ला रहे हैं कि मल्ल राज्य के कोने-कोने में ऐसी चर्चाएँ फैली हुई हैं कि महाराज ओक्काक का देहान्त हो गया है और उनके नाम पर (क्रमशः संकेत सहित) महामात्य राजपुरोहित और महाबलाधिकृत शासन चला रहे हैं ?

राजपुरोहित : क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जान-बूझ कर या अनजाने में ही दोनों पड़ोसी राज्य हमारे ऊपर आक्रमण कर दें ?

ओक्काक : (क्रूर मुस्कान से) तो हम उनका सामना करके वीरगति प्राप्त करेंगे और हमारे साथ आप तीनों भी।

महाबलाधिकृत : और हमारे बाद क्या होगा ?

महामात्य : मल्ल राज्य का कोई बचा-खुचा, महत्वाकांक्षी सामंत राज-सिंहासन पर बैठ जायगा, यही न ?

ओक्काक : और अगर आप लोगों की इच्छानुसार राज्य को एक उत्तराधिकारी मिल जायेगा, तो क्या होगा ?

महामात्य : तो प्रजा और सेना का मनोबल बढ़ेगा।

महाबलाधिकृत : और हमारे शत्रु अपने कुचक्रों में हतोत्साहित होंगे।

महामात्य : उत्तराधिकारी की घोषणा सही मानों में किस बात की घोषणा है ? स्थायित्व की एक परंपरा के बने रहने की जो एक ओर सामान्य नागरिक को विश्वास दिलाती है कि उसका जीवन सहज रूप से चलता रहेगा और दूसरी ओर कई तरह की शंकाओं, महत्वाकांक्षाओं और षड्यन्त्रों को मिटा देती है। यह धुंध, भ्रांति और अनिश्चय की टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से हटा कर मल्लराज्य को विकास के राजपथ पर ।

ओक्काक : (आवेश में) हमें भी मल्ल राज्य के विकास की चिंता है। यह

इक्ष्वाकु वंश भाग्य ही नहीं सौंपी गयी।

महामात्य   लेकिन जब इक्ष्वाकु वंश आत्मसम्मान का अंत पहुँचा देता न अपना दायित्व नहीं निभाना चाहता हो, तब हम क्या करें? पुष्पमित्र चुके स्वयं रहें कि राज्य शत्रुओं और दस्युओं के हाथों में छिन रहा है? महान् आदर्शों का जीवन एक मोड़ पर ठहर गया है? एक युग का पूरा राष्ट्र.. जिसे व्यवस्था अनेक पीढ़ियों का गर्व और परिश्रम और निर्माण (संकेत सहित) केवल एक (असमर्थ) पुरुष के अपवाद के डर से।

ओक्काक . (आगे आ जाता है। बड़े क्रोध से) अमात्य-परिषद् को सुविनीत नाम से पुकारा जाता है. लेकिन हम मान रहा है कि वास्तव में इसकी संज्ञा दुर्विनीत होनी चाहिए।

महामात्य   (व्यंग्यभरी, मुग्ध मुस्कान से) यह केवल आपकी ही प्रतिक्रिया नहीं है, महाराज! प्रियदर्शी अशोक को भी ऐसा ही लगा होगा, जब वे बौद्धसंघ को इच्छानुसार धन नहीं दे सके थे। महाक्षत्रप रुद्रदामा ने भी यही सोचा होगा, जब वे सुदर्शन सरोवर के परिसंस्कार के लिए मनमानी राशि पानी में नहीं फेंक सके थे। श्रावस्ती के नरेश को भी ऐसा ही प्रतीत हुआ होगा, जब उन्होंने चाहा था कि ।

ओक्काक   (क्रोधपूर्वक) यह क्यों नहीं कहते कि आप अपनी और अमात्य परिषद् की शक्ति का प्रदर्शन करना चाहते हैं? मुझे एक उदाहरण बना कर स्वयं एक उदाहरण बनना चाहते हैं .. इतिहास के पृष्ठों में आकर अमृत के घूँट पीना चाहते हैं। .. (व्यंग्य से) जैसे अजातशत्रु के महामंत्री वर्षकार, जैसे उदयन के महामंत्री यौगंधरायण जैसे चंद्रगुप्त के महामंत्री चाणक्य. ।

नेपथ्य से, कुछ दूर और पास से क्रमशः तीन पुरुष-स्वर —'सूर्य आज्धाउ डूब चुकाउ हैउ. ।'

महामात्य   (स्थिर दृष्टि से ओक्काक की ओर देखता है।) आप जिस मन स्थिति में हैं, उसमें ऐसी शंका करना स्वाभाविक है। और ऐसा कोई उपाय नहीं, जिससे मैं अपनी निश्छलता प्रकट कर सकूँ।

विराम।

राजपुरोहित · समय हो रहा है, महामात्य!

महाबलाधिकृत हमें शीघ्रता करनी चाहिए।

महामात्य (दाईं ओर देखते हुए, पुकार कर) महत्तरिका !

महत्तरिका का प्रवेश।

महत्तरिका श्रीमान ! (हाथ की जयमाला चौकी पर रख देती है।)

महामात्य राजमहिषी तैयार हैं ?

महत्तरिका हाँ, महोदय !

विराम।

महामात्य उनकी सेवा में सूचना दो कि समय हो गया है।

महत्तरिका का प्रस्थान। नेपथ्य में वाद्य-ध्वनियों की ऊँची-नीची लय। कुछ क्षणों बाद मंद-मंथर शीलवती का प्रवेश। सामने खड़ी हो जाती

महामात्य (धीमे स्वर में) महादेवि ! नहीं समझ पा रहा कहाँ क्या कहूँ ! बस, यही आशा है कि आप अनिवार्यता को समझ रही हैं हमारी विवशता को ... पुरोहित की तरफ देखता हुआ जयमाला की ओर संकेत करता है। राजपुरोहित जयमाला लेकर ओक्काक के एक ओर आ जाता है।)

राजपुरोहित (जयमाला बढ़ाते हुए) महाराज !

शीलवती नीचे देख रही है, ओक्काक एकटक शीलवती को।

राजपुरोहित महाराज !

महामात्य ओक्काक के दूसरी ओर, और महाबलाधिकृत उसके पीछे आ जाते हैं।

राजपुरोहित राजमहिषी को जयमाला दे दीजिये, महाराज !

ओक्काक (जयमाला ले लेता है। ऊँचा हाथ किये पल-भर उसे ध्यान से देखता है। करुण मुस्कान से) जय माला ! (शीलवती को दे देता है।)

राजपुरोहित महाराज ! अब जो मैं कहूँ, उसको दुहराइये। (विराम) राजमहिषी शीलवती ! मैं मल्लराज्य का शासक और आपका पति ओक्काक, अमात्य-परिषद् के इस निर्णय से पूरी तरह सहमत हूँ कि आपको गर्भसिद्धि के लिए तीन अवसर दिये जायें। यह पहले अवसर की वेला है। कहिये महाराज !

विराम। महामात्य और महाबलाधिकृत ओक्काक के कुछ पास आ जाते हैं।

महाबलाधिकृत महाराज !

ओक्काक (कुछ अवसाद में) हाँ हाँ, ठीक है।

राजपुरोहित और महाबलाधिकृत महामात्य की ओर देखते हैं। महामात्य स्थिर दृष्टि से ओक्काक को देखता है।

महामात्य (राजपुरोहित से) आगे बोलिये !

राजपुरोहित (ओक्काक से) कहिये मैं (शीलवती की ओर संकेत-सहित) आपको आज की रात के लिए—सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, उपपति चुनने का अधिकार देता हूँ।

विराम।

राजपुरोहित कहिये, महाराज !

विराम।

महाबलाधिकृत (और पास आ जाता है।) कह दीजिये !

विराम।

महामात्य (अधिक निकट आते हुए, ठंडे स्वर में) समय हो रहा है, महाराज !

ओक्काक (तीनों की ओर देखता है। घूंट-सा भर कर) अधिकार देता हूँ।

राजपुरोहित कृपया पूरा वाक्य कह दीजिये।

ओक्काक (यकायक फूट पड़ता है।) कह तो दिया है। (झपट कर कोष्ठ के पास जाता है। चषक में मदिरा ढालता है। गटागट पीने लगता है।)

शीलवती (तीनों से) आप लोग घड़ी भर के लिए ।

तीनों का प्रस्थान। शीलवती जयमाला चौकी पर रख कर पास आती है।)

शीलवती : आर्यपुत्र !

ओक्काक : (मुड़ता है। शीलवती की ओर देखता है। करुण भाव से मुस्कराता है।) अब यह गठबंधन नहीं, आज के लिए इसका पात्र दूसरा है। (फिर चषक मुंह से लगा लेता है। नेपथ्य से वाद्य-ध्वनि कुछ ऊंची होकर मंद हो जाती है।) सुन रही हो इन मंगलवाद्यों को ?, इन ध्वनि-तरंगों में कितने आतुर हृदयों की उमगें है।.. कहते हैं, बहुत दूर-दूर से आये हैं लोग—प्रवासी बन कर घूमा है, एक-एक दिन में पचास-पचास योजन की दूरी मारने वाले [illegible] रात बिता [illegible]

गया था. मल्लराज्य के इस छोर से उस छोर तक, एक नागरिक ऐसा नहीं बचा, जिस तक यह घोषणा न पहुँची हो। (शीलवती की ओर देखता है।) तुमने सुनी थी न ?

शीलवती . क्यो बार-बार इसी बात को लेकर ?

ओक्काक : (आगे बढ़ आता है।) क्यो नहीं सुनी होगी ? राजधानी मे तो पिछले सप्ताह एक-एक गली, एक-एक मार्ग, एक-एक उद्यान, एक-एक क्रीड़ागृह !

शीलवती (पास आते हुए) ओक्काक !

ओक्काक (विह्वल होकर) कहने दो न मुझे ! मेरे तो जैसे भर गयी है वह उद्घोषणा सांसो की गति और धारा मे घुलमिल गयी है ऐसे समा चुकी है मेरी कि अब सोते-जागते, उठते-बैठते, चलते-फिरते (ठिठक जाता है। आतंक से) सुनो सुनो फिर उभरा स्वर फिर !

नेपथ्य में नगाड़े की ध्वनि। फिर उद्घोषक का स्वर 'मल्लराज्य के हर नागरिक को सूचना दी जाती है कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद पूर्णमासी की सध्या को राजमहिषी शीलवती धर्मनटी बन कर राजप्रांगण मे उतरेंगी। मल्लराज्य के हर नागरिक को प्रत्याशी बन कर पधारने का आमत्रण है। राजमहिषी शीलवती अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी नागरिक को एक रात के लिए सूर्य की अतिम किरण से, सूर्य की पहली किरण तक उपपति के रूप मे चुनेंगी।' नगाड़े की ध्वनि। विराम।

ओक्काक (किंचित रोष से) तुम्हें मालूम है, यह आलेख किसने तैयार किया है ? मैं कल ही अमात्य-परिषद् में प्रस्ताव रक्खूँगा कि उस व्यक्ति को तुरत निकाल बाहर किया जाये। (बल-पूर्वक) उसने एक भयकर भूल की है अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी नागरिक को हूं, नागरिक ! नागरिक तो शिखण्डी भी था। यहां होना चाहिए, किसी भी पुरुष को चुनेंगी (यकायक ठिठक कर) नहीं पुरुष तो मैं भी हूं। (शीलवती की ओर देखते हुए, घुटे हुए क्रोध से) सही होगा—सम्पूर्ण पुरुष पुंसत्व वाला पुरुष ।

शीलवती (पास आ जाती है।) ओक्काक. देखो, सभालो अपने-

महाबलाधिकृत महाराज !

ओक्काक (कुछ अनमना से) हाँ हाँ, ठीक है।

राजपुरोहित और महाबलाधिकृत महामात्य की ओर देखते हैं। महामात्य स्थिर दृष्टि से ओक्काक की ओर देखता है।

महामात्य (राजपुरोहित से) मान लीजिए!

राजपुरोहित (ओक्काक से) कहिए मैं (शीलवती की ओर संकेत करते हुए) इनको आज का राज्य दिए — सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, स्वच्छन्द घूमने का अधिकार देता हूँ।

विराम।

राजपुरोहित कहिए महाराज !

विराम।

महाबलाधिकृत (और पास आ जाता है।) कह दीजिये !

विराम।

महामात्य (अधिक निकट आते हुए, ऊँचे स्वर में) समय हो रहा है महाराज !

ओक्काक (तीनों की ओर देखता है। घूँट-सा भर कर) अधिकार देता हूँ।

राजपुरोहित कृपया पूरा वाक्य कह दीजिये !

ओक्काक (एकाएक फूट पड़ता है।) कह तो दिया है। (झपट कर कोष्ठ के पास जाता है। चषक में मदिरा डालता है। गटागट पीने लगता है।)

शीलवती (तीनों से) आप लोग घड़ी भर के लिए ।

तीनों का प्रस्थान। शीलवती जयमाला चौकी पर रख कर पास आती है।)

शालवती आर्यपुत्र !

ओक्काक (मुड़ता है। शालवती की ओर देखता है। करुण भाव से मुस्कराता है।) अब यह मधपान नहीं आज के लिए दूसरा पात्र दूसरा है। (फिर चषक मुँह से लगा लेता है। नेपथ्य में वाद्य-ध्वनि कुछ ऊँची होकर मद हो जाती है।) सुन रही हो इन मंगलवाद्यों को ? इन ध्वनि-तरंगों में कितने आकुल हृदयों की उमंगें हैं। कहते हैं, बहुत दूर-दूर से आये हैं लोग— प्रत्याशी बन कर सुना है, एक-एक दिन में पचास-पचास योजना की दूरी मापने वाले धावकों का जाल बिछा दिया

गया था मल्लराज्य के इस छोर से उस छोर तक, नागरिक ऐसा नहीं बचा, जिस तक यह घोषणा न पहुँची हो। (शीलवती की ओर देखता है।) तुमने सुनी थी न ?

शीलवती — क्यों बार-बार इसी बात को लेकर ?

ओक्काक — (आगे बढ़ आता है।) क्यों नहीं सुनी होगी ? राजधानी में तो पिछले सप्ताह एक-एक गली, एक-एक मार्ग, एक-एक उद्यान, एक-एक क्रीड़ागृह !

शीलवती — (पास आते हुए) ओक्काक !

ओक्काक — (विह्वल होकर) कहने दो न मुझे ! मेरे तो भर गयी है वह उद्घोषणा साँसों में। धारा में घुलमिल गयी है ऐसे समा चुकी है मेरी कि अब सोते-जागते, उठते-बैठते, चलते-फिरते ठिठक जाता है। (आलक से) सुनो सुनो फिर उभरा वह स्वर फिर !

नेपथ्य में नगाड़े की ध्वनि। फिर उद्घोषक का स्वर।
'मल्लराज्य के हर नागरिक को सूचना दी जाती है कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद पूर्णमासी की सन्ध्या को राजमहिषी शीलवती यमंनटी बन कर राजप्रागण में उतरेंगी। मल्लराज्य के हर नागरिक को प्रत्याशी बन कर पधारने का आमन्त्रण है। राजमहिषी शीलवती अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी नागरिक को एक रात के लिए सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक ... में चुनेंगी।' नगाड़े की ध्वनि। विराम।
... मालूम है, यह आलेख किसने तैयार ... अमात्य-परिषद् में प्रस्ताव रक्खूँगा कि ... किया जाये। ...

मैंने जीवन के इस रूप को अपना लिया था (तुरत) अपना लिया है और कभी नही सोचा था कि ऐसी कोई बात भी हो सकती है। वर्ष पर वर्ष बीतते गये ऋतुएँ पर ऋतुएँ और स्वीकार की लकीर और गहरी होती गयी फिर तरह उस सारे ढांचे को तोड़-फोड़ कर नये सिरे से (अपने को सभालने का यत्न करती है।) देखो, आज की रात हम दोनो एक ही सग्राम के योद्धा है। बस, हमारा क्षेत्र अलग है, चुनौती अलग है।

ओक्काक (तीव्र स्वर मे) नही बहुत अतर है दोनो मे।

शीलवती (बलपूर्वक) नही तुम यहाँ सारी रात जागोगे, मैं सारी रात जागूंगी। वही अपमान और लज्जा और वही चिंता और घुटन और घबराहट !

ओक्काक (हल्की मुस्कान से) क्यो ? घबराहट क्यो ?

शीलवती कैसी बात करते हो ! जानते नही, अतःपुर की स्त्री के लिए क्या विशेषण देते रहे हैं तुम्हारे कविजन ? असूर्यस्पर्शा सूर्य की किरणो ने भी जिसका स्पर्श नहीं किया हो ! वही स्त्री हाथो मे जयमाला लिये राजप्रागण मे उतरेगी —सहस्त्रो दृष्टियो का केन्द्र बनी, और एक रात के लिए किसी पुरुष के साथ चली जायेगी, जिसे उसने कभी देखा नही जिसके सबध मे वह कुछ नहीं जानती .और उसे अपना शरीर समर्पित कर देगी—अपना रूप, अपना यौवन, अपना कौमार्य .!

ओक्काक (आहत होकर) अपने कौमार्य पर जितना दुख तुम्हे हैं, उतना ही मुझे भी।

शीलवती : (झुंझला कर) ओऽऽह, मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ..हर

. मैंने

[illegible] के बारे मे उनकी आयु ढल चुकी थी। सबधो के उस रूप मे अब शरीर नही आता था लेकिन वे सतुष्ट थे, सुखी थे। क्यो ? शायद कोई दूसरी बात थी, और गहरी, और महत्त्वपूर्ण एक-दूसरे के व्यक्तित्व की अनुरूपता, व्यक्तित्व की समक्ष, स्वभाव का माधुर्य, रुचियो की समानता . ।

ओक्काक : (क्रूर हँसी से) किसे छल रही हो ? मुझे या अपने-

अपना यह अभाव नहीं कसकता ? क्या आपके मन में कभी यह इच्छा नहीं जागती कि आपके कक्ष में एक शिशु किलकारी मारता हुआ दौड़े ? दर्पण जैसे स्वच्छ फर्श में देख कर चमत्कृत हो ? हँसे, तो पल्लव-से कोमल के पीछे नन्हे-मुन्ने दाँत चमकें रोये, तो आँखों से जैसे आँसू झरें अपनी तोतली बोली में आपको पुकारे, तो उस नाम को सुन कर आपकी चेतना का एक-एक तार झंकृत हो उठे वह संबोधन, जो—कहें तो कह सकते हैं कि अब तक की सारी मानवीय सभ्यता और संस्कृति का बीज है ।

शीलवती (विह्वल होकर) महामात्य ! (अपने को संभालने का करती है।)

महामात्य धृष्टता क्षमा, महादेवि आप भावना के दोनों ही ... अकेली खड़ी है। एक अभाव को तो अब नहीं ... लेकिन जहाँ तक दूसरी कमी का प्रश्न है आपको तो—धृष्टता क्षमा—संतुष्ट होना चाहिए कि संयोग से आपके सामने ऐसा रास्ता खुल गया है कि मर्यादा को भंग किये बिना आपको संतान-जैसी निधि मिल सकती है।

शीलवती (हिचकिचाते हुए) लेकिन फिर भी यह बहुत कठिन है कि ।

महामात्य अपने मन को पक्का कीजिये, यह सोच कर कि केवल एक रात का प्रश्न है। सूर्यास्त के साथ जा रही हैं, सूर्योदय के साथ लौट आयेंगी।

शीलवती एक स्त्री की दृष्टि से आप नहीं देख सकते । बिलकुल अजनबी पुरुष के साथ ।

महामात्य स्वीकार करता हूँ आपका उद्वेलन लेकिन यों सोचें कि बस, एक प्रक्रिया में से निकलने-भर की बात है—औपचारिकता, एक खानापूरी . उन कुछ क्षणों के लिए अपने-आपको बिलकुल भूल जायें.. पलकें मूँद लें, कान बंद कर लें .बिलकुल ढीला छोड़ दें शरीर को पाँचों इंद्रियों को अचेतन करके भावतल को निर्जीव बना लें और मन की आँखों से लगातार केवल भावी परिणाम की ओर देखें .अबोध मुद्रा, घुँघराली अलकें, दूधिया दाँत नारीत्व की सार्थकता मातृत्व की तृप्ति...!

शीलवती सम्मोहित-सी महामात्य की ओर देखती है। वह तनिक झुक कर द्वार की ओर संकेत करता है।

आगे-आगे गोमवती और पीछे-पीछे महामात्य का प्रस्थान। नेपथ्य में वाद्यों की ऊँची-नीची लय। ओक्काक का प्रवेश। इधर-उधर देखता है। गवाक्ष तक पहुँचता है। एक चषक भरता है। उठाता है। सहसा वाद्य-ध्वनि विलुप्त हो जाती है। ओक्काक ठिठक जाता है। गवाक्ष की ओर देखता है, बढ़ता है, बीच में रुक जाता है, जैसे कुछ अकल्पनीय, मर्मान्तक घटने जा रहा हो। महत्तरिका का प्रवेश। हाथ में कटोरी।

महत्तरिका : महाराज! आपके सिर में पीड़ा थी। ...दबा दूँ? यह लेप लगा दूँ?

ओक्काक : ठीक हूँ अब।

(नेपथ्य में हल्का-सा कोलाहल। महत्तरिका कटोरी चौकी पर रख देती है। ओक्काक चषक के कुछ घूँट लेता है। दो-तीन बार महत्तरिका की ओर देखता है। दृष्टि मिलने पर झेंप-सा जाता है।)

ओक्काक : (दूसरी ओर देखते हुए) तनिक देखो तो... क्या हो रहा है वहाँ...!

महत्तरिका : (गवाक्ष तक जाती है। देखती रहती है।) राजप्रांगण नागरिकों से भरा पड़ा है।... सैनिक उन्हें आगे बढ़ने से रोक रहे हैं।... (विराम) मंडप के बीचों-बीच मल्लराज्य की ध्वजा लहरा रही है। पास ही महामात्य खड़े हैं। उनके दाईं ओर राज-

. . . . .

महादेवि पर लगी हैं। (विराम) महादेवि हाथों में जयमाला लिये आगे बढ़ रही हैं—मंद-मंथर गति से... किसी के सामने तनिक ठिठकती हैं, तो परिचारिका तुरंत कान में उसका परिचय देती है। (विराम) महादेवि अनमने भाव से आगे बढ़ी जा रही हैं। तोरण पर तोरण, स्तंभ पर स्तंभ पीछे छूटते जा रहे हैं।... सबकी आँखें महादेवि पर लगी हैं, लेकिन वे जैसे देखते हुए भी किसी को नहीं देख रही हैं। (विराम) बाईं पंक्ति पूरी हो गयी।...महादेवि मुड़ गयी हैं।... दाईं ओर आ रही हैं। (विराम) कैसा गहरा मौन है!... जैसे राज-प्रांगण न हो, श्मशानभूमि हो।... (विराम)

एक रथ आकर रुका है। उसमे से एक व्यक्ति उतरा है।... मडप की ओर आ रहा है।

ओक्काक (हल्की मुस्कान से) कोई प्रत्याशी होगा।

महत्तरिका (*कुछ रुक कर*) *नागरिको के समूह को चीर कर वह शीघ्रता* से आगे बढ रहा है। कुछ कोलाहल होने लगा है। . महामात्य इत्यादि भीड मे उसी ओर देख रहे हैं। महाबलाधिकृत यह जानने के लिए बढने लगे हैं कि क्या बात है महादेवि भी दायी पक्ति के बीच मे रुक गयी। एक सैनिक ने उस व्यक्ति को रोकने का प्रयास किया। वह उससे कुछ कह कर फिर आगे आने लगा है। (**विराम। आवेश मे**) अरे, वह तो बिल्कुल पास आ गया। दोनो पक्तियो के बीच मे .(**विराम**) महादेवि बिल्कुल स्तब्ध खडी है। वह भी उनको एकटक देख रहा है। (**ओक्काक से**) आइये न इधर आइये !

ओक्काक (**व्यग्र होकर**) नहीं, नही तुम्ही बताओ आगे क्या हुआ ?

महत्तरिका महादेवि ! (**अटक जाती है।**)

ओक्काक (**कुछ बढ़ कर**) क्या हुआ आगे ?

महत्तरिका (**धीरे-धीरे**) अब मैं इस व्यक्ति को पहचान पा रही हूँ।

ओक्काक . कौन है कौन है वह ?

महत्तरिका (**ओक्काक की ओर देखती है।**) आर्य प्रतोष।

(**नेपथ्य से ऊँचा कोलाहल।**)

ओक्काक (**विह्वल होकर**) क्या हुआ ?. क्या हुआ वहाँ ?

महत्तरिका के होठ हिलते हैं, पर कोलाहल के कारण कुछ सुनायी नहीं देता।

ओक्काक (**ऊँचे स्वर मे**) बोलो न क्या हुआ ?

कोलाहल यकायक थम जाता है। महत्तरिका एकटक ओक्काक की ओर देखती है।)

महत्तरिका (**धीमे स्वर मे**) महादेवि ने आर्य प्रतोष के गले मे जयमाला डाल दी।

धीरे-धीरे अधकार होने लगता है।

अंक २

पक्षी की बोली। मंच का मध्यवर्ती भाग आलोकित होता है, जहाँ ओक्काक हाथ पीछे बाँधे धीरे-धीरे टहल रहा है। फिर बारी-बारी से कक्ष के अन्य भाग आलोकित होते हैं, सबसे बाद में शैया। फिर एक सम्पूर्ण प्रकाश-व्यवस्था मंच पर छा जाती है। नेपथ्य से, कुछ दूर और पास से क्रमशः तीन पुरुष-स्वर— 'रात्रि का एक मुहूर्त बीत गया... ।' महत्तरिका का प्रवेश।

महत्तरिका महाराज! रात का एक मुहूर्त बीत गया।

ओक्काक . (मुड़ कर देखता है। धीरे-धीरे) एक मुहूर्त? अभी तक— केवल एक? . घटिका में केवल दो बार जल भरा? केवल दो बार वह रीती हुई? . (कुछ तीव्र स्वर में) नहीं! अवश्य कहीं कोई प्रमाद हुआ है। समय-सूचकों को तुरन्त यहाँ बुलाओ।

महत्तरिका : (कुछ रुक कर, नर्मी से) नहीं, महाराज! कहीं कोई त्रुटि नहीं है।. अभी रात बीती ही कितनी है! (गवाक्ष के पास आ जाती है।) आप स्वयं आकर देखें, पश्चिमी आकाश में अभी भी लालिमा के कुछ छींटे हैं।

ओक्काक . (अपने को संभाल कर) अच्छा? . (धीरे-धीरे) और इतनी देर में मैंने अपना जीवन . जैसे नये सिरे से जी लिया।

विराम।

महत्तरिका : (अनुरोध से) महाराज!...थोड़ा-सा कुछ ग्रहण कर लेते ..

एक दूसरे के सामने खड़े ओक्काक (राजेन्द्र गुप्त) और शीलवती (उत्तरा बावकर)

निर्णय के क्षण के भावाभिषेक को झेलती शीलवती (उत्तरा बावकर)

मर्यादा का पालन तो करना ही होता है।

ओक्काक : (किंचित आवेग से) कुछ नहीं होता महत्तरिका कुछ नहीं होता। ..जीवन बहुत निर्मम है। (आगे आते हुए, कुछ अपने-आप से ही) होने से पहले आदमी कितना सोचता है, कितना डरता है.. कि ऐसा कैसे होगा क्यों कर होगा मैं सह नहीं पाऊँगा, मैं टूट जाऊँगा चूर-चूर हो जाऊँगा (करुण मुस्कान से) और फिर उठ खड़ा होता है, धावी के खिलौने के समान (विराम। पूछता है।) क्या देख रही हो नीचे ?

महत्तरिका (धीरे-धीरे) खाली मंडप हवा में धीरे-धीरे लहराते हुए तोरण और वंदनवार स्तम्भों में लिपटी हुई पुष्पमालाएँ - यहाँ-वहाँ टूटी हुई एक-दो लुढ़के हुए मंगलकलश (विराम) सब कुछ मौन स्तब्ध !

ओक्काक · (करुण मुस्कान से) उत्सव के बाद का सूनापन !

मदिराकोष्ठ तक आता है। एक चषक भरता है। पीता है। प्रतिहारी का प्रवेश।

प्रतिहारी · महाराज ! गुप्तचर देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं। क्या उन्हें आने की आज्ञा मिलेगी ?

ओक्काक : हाँ ! .(प्रतिहारी का प्रस्थान। ठंडी साँस लेकर) आज की रात कुछ नहीं . (विकृत ढंग से हँसता है।) अब कुछ भी गोपनीय नहीं। (दो-तीन घूँट लेता है।) महत्तरिका !

महत्तरिका . महाराज !

ओक्काक · कौटिल्य ने रात को आठ भागों में बाँटा है, राजा के लिए (बीच की ओर आते हुए) पहले भाग में गुप्तचरों से बातचीत [illegible]सरे में स्नान, भोजन और स्वाध्याय तीसरे में अन्तःपुर [illegible] और पाँचवें में शयन. .छठवें में निद्रा का [illegible] से मंत्रणा . आठवें में राज- [illegible] .(विराम) लक्ष्य किया [illegible]आ ! ...या बहुत अच्छा

...... प्रधान का पुष्पारोपण कर दूँ ? क्या कमरा;
पोगाह पर उसको भस्म कर या स्थापित करता हूँ ?

महत्तरिका (कुछ विह्वल-सी) महाराज ! अगर कुछ प्रहर नहीं ...
चाहें, तो विश्राम ही कीजिए। नींद आ जायगी, तो ।

ओक्काक नींद ? .. (करुण मुस्कान सहित) महत्तरिका ! आज ...
तो मुझे मृत्यु भी नहीं आयेगी। (मदिराकोष्ठ तक आता है। चषक भरता है। कुछ घूंट लेता है। बिना मुड़े हुए) तु...
जाओ अपने घर, अपने पति के पास... मेरे लिए क्यों उसकी निकटता से वंचित रहो ?

महत्तरिका वे आज यहाँ नहीं हैं, महाराज ! किसी राजकीय काम से श्रावस्ती भेजे गये हैं।

ओक्काक ओह ! (विराम। मुड़ कर) अगर होते, तो क्या आज की रात ?

महत्तरिका महाराज ! (सिर झुका लेती है।)

ओक्काक : बताओ मुझे। संकोच मत करो। (विराम) महत्तरिका !

महत्तरिका (आँखें झुकाये हुए) वह नहीं सकती।

ओक्काक : क्यों ?

महत्तरिका (शीघ्रतापूर्वक) मेरा मतलब है, कुछ निश्चित नहीं रहता।

ओक्काक क्यों ?

महत्तरिका कई बातों पर निर्भर करता है।

ओक्काक जैसे ?

विराम।

महत्तरिका . मेरी या उनकी मन स्थिति कार्य की अधिकता या कमी. . थकान ।

विराम।

ओक्काक और ?

विराम।

महत्तरिका मेरी शारीरिक अवस्था. ।

ओक्काक . और ?

महत्तरिका : बच्चों को लेकर हमारा निश्चय ।

ओक्काक तुम्हारे अभी कोई सन्तान नहीं है न ?

महत्तरिका : नहीं ।

ओक्काक : ऐसा क्यों ?

महत्तरिका : हम अपनी योजना के अनुसार चल रहे हैं।

ओक्काक योजना ?

महत्तरिका किसी आकस्मिक आपत्ति के लिए पर्याप्त द्रव्य अपना भवन उसमें सारी सुविधाएँ अपना रथ इत्यादि।

विराम।

ओक्काक महत्तरिका ! आज की जैसी रातें सप्ताह में कितनी होती है ? और कितनी नहीं होती ?

महत्तरिका (आर्त स्वर में) महाराज ! आप तनिक सोचिये तो !

ओक्काक (कुछ ठहर कर) जानता हूँ, महत्तरिका ! यह सब [illegible] व्यक्तिगत बातें है और मेरा तुमसे कुछ भी पूछना अनुचित है। लेकिन तुम्हे नहीं मालूम, यह सब जानने के लिए मेरा मन कितना आकुल रहता है ! मेरा कोई मित्र नहीं, कोई अंतरंग नहीं। राजसिंहासन एक अदृश्य दीवार है, जिसे लाँघ कर न मैं उस ओर जा सकता हूँ, न उस ओर से कोई इस ओर आ सकता है। मैं किसी के अनुभवों से लाभ नहीं उठा सकता, किसी को अपने भेदों का भागीदार नहीं बना सकता, किसी से अपना दु:ख नहीं बाँट सकता।

विराम।

महत्तरिका : शारीरिक संबंधों की संख्या का कोई सामान्य नियम नहीं है। दम्पत्ति विशेष के अनुसार ये बदलती रहती हैं।. .जहाँ तक हमारी बात है ब्याह के बाद प्रारंभ में संख्या अधिक थी। अब घट कर स्थिर हो गयी है . सप्ताह में प्राय तीन बार .!

ओक्काक पहल कौन करता है ?

महत्तरिका (सलज्ज स्मित से) स्वाभाविक है कि पति।

ओक्काक कभी तुमने नहीं की ? (विराम) बोलो . !

महत्तरिका बहुत कम। ..और जब की, तो पति ने महीनों चिढ़ाया।

विराम।

ओक्काक ' पति और पत्नी के बीच यह संबंध.. तुम्हें कुछ विशेष लगता है ?

महत्तरिका : (कुछ रुक कर) मैं समझी नहीं।

वकाक कैसी ध्वनि है यह ?

रिका चक्रवाक पक्षी है, महाराज ! महादेवि के हाथ से मृणाल का रस नहीं मिला, उनका स्वर नहीं सुना, इसलिए व्याकुल है।

वकाक ओह ! (गवाक्ष तक आ जाता है। धीरे-धीरे) सारी जागेंगे सारी रात चक्रवाक मैं कुमुदनी और चंद्रमा ।

मंच का प्रकाश क्रमशः मंद होते हुए बुझ जाता है — केवल गवाक्ष पर चंद्र-किरणों-सा बहुत धूमिल आलोक रहता है। विराम। मंच पर धीरे-धीरे प्रकाश होता है। ओक्काक एवं महत्तरिका के स्थान पर क्रमशः शीलवती तथा प्रतोष दिखायी देते हैं।

: (धीरे-धीरे) कभी विषकन्या के बारे में सुना था कि बचपन से ही उसे तनिक-तनिक विष देकर तैयार किया है। मैं क्या थी ? इतना बड़ा परिवार और पिता की सीमित आय अभाव वंचना दरिद्रता दुख (क्षणिक विराम) न पाने की कुढ़न न होने की कड़वाहट न मुस्कराने की कचोट न हँसने की घुटन दूसरों के प्रति आक्रोश, अपनों के लिए क्रोध स्वयं से घृणा मुझे बिलकुल ...न से ही नियमित रूप से यह सब मिल रहा था —कुछ ...ई तोरा, कुछ आधा माशा, कुछ एक रत्ती अब अगर घर में भी मुझे केवल चार भित्तियाँ और एक छत और दो ... मिलता, तो क्या मेरी प्रकृति का विषैलापन ...नहीं दिखलाता ?

...से) तो राजमहल में जाकर यह विष ?

...) सब उड़ गया धीरे-धीरे —कपूर की तरह ... इतनी सुविधाएँ और इतना वैभव और ऐसी झुलसते मन-प्राण पर चंदन-गंध के समान छाला ... यहाँ इच्छाओं का अंत था, लेकिन साधनों का ...ने की सीमा थी, पर सम्पत्ति की नहीं।

) ब्याह से पहले तुम्हें मालूम था कि

... तो क्या निर्णय में परिवर्तन की को

शीलवती : मेरी क्यों नहीं ?

प्रतोष यह तुम्हारी अपनी खोज है।

शीलवती (प्रसन्न मुस्कान से) प्रारम्भ हो तो गयी है।

प्रतोष बधाइयाँ !

शीलवती (स्थिर दृष्टि से देखती है।) इस तरह से क्यों बोल रहे हो ?

प्रतोष (कृत्रिम आश्चर्य से) किस तरह बोल रहा हूँ ?

शीलवती (ठहर कर) मैं सोचती थी कि तुम सन्तुष्ट होगे !

प्रतोष किससे ?

विराम।

शीलवती जो कुछ हो रहा है उससे। देखो, ब्याह के बाद मैं मुझे (अटक जाती है। क्षणिक विराम) शायद तुम नहीं जानते मैं अभी तक कुमारी हूँ।

प्रतोष तुम समझती हो, तुम्हारे कौमार्य में अभी तक मेरी रुचि है ?

विराम।

शीलवती : मैं तुम्हारी अपराधिनी हूँ। क्या उसका यह एक प्रतिकार नहीं हो सकता ?

प्रतोष . (लापरवाही से) हो... सकता... है... लेकिन एक उससे भी अच्छा है।

शीलवती (रुक कर) सो क्या ?

विराम।

प्रतोष तुम यहाँ जैसी आयी हो, बिल्कुल वैसी ही वापस जाओ।

शीलवती · (आतंक से) अर्थात् ?

प्रतोष · मैं तुम्हारा स्पर्श तक न करूँ।

क्षणिक विराम।

शीलवती (विह्वल होकर) नहीं . तुम मुझे इतना कठोर दंड नहीं दे सकते, मेरे साथ इतना बड़ा अन्याय नहीं कर सकते (झुक कर घुटनों के बल बैठ जाती है। उसके दोनों पैर अपनी बाँहों में घेर लेती है, घुटनों से सिर टिका देती है।) तुम नहीं जानते .मैंने कितनी यातना सही है !

प्रतोष (सन्तुष्ट स्मित से कुछ क्षणों तक शीलवती की ओर देखता रहता है। झुक कर) उठो !

उठाता है। शीलवती कुछ चमत्कृत-सी है। प्रतोष की ओर देखती है, फिर उसके दोनों हाथों की ओर, जो

सम्भावना थी ?

शीलवती (तनिक सोच कर) ऊँह, छोड़ो ... जो बीत गया, उसे लेकर उलझने से क्या लाभ ! (प्रतोष की ओर देखती है। हल्की मुस्कान से) कुछ अपने बारे में बताओ। . सुना है, बड़े सम्पन्न व्यापारी हो गये हो।

विराम।

प्रतोष (धीरे-धीरे) हाँ तुम्हारे ब्याह के साथ जब जाना कि कहीं कोई आस्था, कोई विश्वास नहीं है, कोई मूल्य, कोई सिद्धांत नहीं है, मगर कुछ है जो केवल मुद्रा—व्यक्तिगत सुख की खोज तो बस, फिर सारे मनोबल से जुट गया उसी के पीछे सुबह और दोपहर, अपराह्न और संध्या, रात और दिन केवल एक धुन, केवल एक धुन, केवल एक चिंता, केवल एक लक्ष्य तब जाना कि अर्थ का अर्जन उतना कठिन नहीं है . बस, तन और मन का पूरा समर्पण चाहता है. . (शीलवती की ओर देख कर मुस्कराता है।) और इस तरह मैं मुद्राराक्षस बन गया।

विराम।

शीलवती सुखी हो ?

प्रतोष तुम सुखी हो ?

शीलवती (एक ओर बढ़ जाती है।) मैंने तुमसे पूछा है।

प्रतोष तो दुखी भी नहीं हूँ। . वैभव बहुत-कुछ दे देता है, और जो नहीं दे पाता, वह उतना महत्त्वपूर्ण नहीं लगता।

विराम।

शीलवती ब्याह क्यों नहीं किया ?

प्रतोष (कृत्रिम आश्चर्य से) यह क्या होता है ?

शीलवती (झेंप जाती है। अपने को सँभाल कर) व्यक्तिगत सुख की खोज में क्या ब्याह नहीं आता ?

प्रतोष तुम्हीं बताओ. आता है क्या ?

शीलवती सुनते तो हैं।

प्रतोष साधन बन कर न ? उनकी मेरे पास कमी नहीं है।.. रही शरीर की आवश्यकताएँ, सो उनकी पूर्ति के और भी रास्ते हैं। (शीलवती की ओर देखता है। व्यंग्यभरे, सूक्ष्म स्मित से).. मैं केवल अपनी बात कर रहा हूँ।

विराम।

बिंदु . और कभी सडक पर किसी रथ की आहट और घोड़े की टापें . बस . !

महत्तरिका सो जाता है सब कुछ महत्वाकांक्षाएँ, और सपने, संघर्ष, और अंधी दौड़ . !

ओक्काक : (करुण मुस्कान से) बहुत कुछ नही भी सोता (संकेत सहित, किंचित आह्लाद से) वह देखो, उस भवन के ऊपर कक्ष में दीप जले। (गवाक्ष से हट जाता है।) हाल में ही ** अभियोग आये थे न्यायालय मे (कुछ घूंट लेता है व्यापारी नागेश ने बहुत बड़े राजकीय ऋण के लिए . पत्नी का उपयोग किया था। अभियोग अनुदान आयोग के अध्यक्ष पर था, निगरानी समिति की ओर से तुमने सुना होगा ?

महत्तरिका हाँ, महाराज !

ओक्काक दूसरा अभियोग एक गायक की पत्नी की ओर से था, जो वैवाहिक बंधन से छुटकारा पाना चाहती थी। उसका . था कि धनी नागरिक उद्दालक की पत्नी से उसके पति . तिक संबंध था। बाद में मालूम हुआ कि उद्दालक की सम्पत्ति वास्तव में उनकी पत्नी की थी और वह उसके सं . पर चलता था। (विराम) नागेश और उद्दालक आज इन पतियो के साथ मेरी पूरी सहानुभूति है।. इन बेचारो के जीवन मे ऐसी कितनी ही रातें आयी होगी ! (विराम) . न्यायाधीश ने अपने निर्णय में इन पतियों के नाम नहीं लिये थे। कहा था कि ये महानुभाव संज्ञाएँ नहीं है – ये विशेषण है, विशेषण। (महत्तरिका की ओर देखता है।) जानती हो, कौन-सा ? (तीव्र स्वर में) जो मैं हूँ ! जो मैं हूँ ! (कोष्ठ तक आकर चक्कर भरता है। गटागट पी जाता है। फिर कोष्ठ पर कुहनियाँ टिकाये, निढाल-सा खड़ा रहता है। करुण स्वर में) बेकार हुआ था मेरा नामकरण संस्कार बेकार है मेरे नाम की राजमुद्रा बेकार होते हैं मेरे हस्ताक्षर--शिलालेखों पर, ताम्रपट्टों पर, राजादेशों पर संज्ञा नहीं हूँ मैं !. विशेषण हूँ, विशेषण !

महत्तरिका . (व्यग्र-सी) महाराज !. (कुछ अपने से ही) कैसे आपका ध्यान बँटे . (क्षणिक विश्राम) वीणा बजाऊँ ? कुछ गाऊँ ? नाचूँ ?

उसके बाहुमूल पाते हैं। प्रतोष धीरे-से अपने हाथ खींच लेता है।

शीलवती (अभिभूत-सी) कैसा अनोखा-सा है तुम्हारा स्पर्श...!

प्रतोष (नासमझी से) क्या?

शीलवती (बाहुमूल की ओर देखते हुए) कितना उष्ण...जैसे कुछ जीवित...!

प्रतोष (हल्की मुस्कान से) कैसी बातें कर रही हो?

शीलवती (किंचित आवेश से) देखो, अभी तक मेरी त्वचा पर स्पंदन है...! (मुग्ध-सी उस स्थान पर अपना कपोल रगड़ती है, अधरों से छूती है। कुछ क्षणों बाद आँखें उठाती है। दृष्टि मिलने पर प्रतोष समझने के ढंग से मुस्कराता है, अपनी बाँहें फैलाता है। शीलवती चुपचाप सिमट आती है, उसके सीने पर सिर टिका लेती है। कुछ क्षणों बाद मुँह ऊपर उठाती है, प्रतोष झुकने लगता है।)

मंच पर धीरे-धीरे अंधकार होने लगता है—केवल एक प्रकाश-वृत्त शैया पर केन्द्रित रहता है और क्रमशः बहुत हल्के-से आलोकाभास में बदल जाता है। जब वह पुनः तेज होता है, तो आलिंगनबद्ध युगल के स्थान पर एक आकृति खड़ी है। एक प्रकाश-वृत्त उस जगह उभरता है, तो मालूम होता है कि वह ओक्काक है—एकटक शैया की ओर देखता हुआ। नेपथ्य से, कुछ दूर और पास से क्रमशः तीन पुरुष-स्वर—'रात्रि का एक मुहूर्त बीऽत गयाऽऽ...!' महत्तरिका का प्रवेश। सम्पूर्ण प्रकाश-व्यवस्था मंच पर छाने लगती है। महत्तरिका हाथ के मदिरापात्र को कोष्ठ पर रखती है। एक चक्कर भरती है। निकट आती है।)

महत्तरिका (धीमे स्वर में) महाराज!...(ओक्काक मुड़ता है। ऐसे देखता है, जैसे पहचानने का प्रयास कर रहा हो।)...आपने बहुत पुराना आसव माँगा था?

ओक्काक ओह हाँ...(चषक ले लेता है। गवाक्ष तक आता है। कुछेक घूँट पीता है।) कितना सन्नाटा है बाहर...!

महत्तरिका (गहरी साँस लेकर) हाँ... बहुत...।

ओक्काक (धीरे-धीरे) दिन में कितनी गति, कैसा प्रवाह... और रात में कितना मौन हो जाता है नगर...यहाँ-वहाँ चमकते हुए प्रकाश-

बिंदु . और कभी सड़क पर किसी रथ की आहट और घोड़े की टापें. बस . !

महत्तरिका — सो जाता है सब कुछ ..महत्वाकांक्षाएँ, और सपने, संघर्ष, और अंधी दौड़. .!

ओक्काक — (करुण मुस्कान से) बहुत कुछ नहीं भी सोता.. (संकेत सहित, किंचित आह्लाद से) वह देखो, उस भवन के ऊपर कक्ष में दीप जले। (गवाक्ष से हट जाता है।) हाल में ही दो अभियोग आये थे न्यायालय में . (कुछ घूंट लेता है।) व्यापारी नागेश ने बहुत बड़े राजकीय ऋण के लिए अपनी पत्नी का उपयोग किया था। अभियोग अनुदान आयोग के अध्यक्ष पर था, निगरानी समिति की ओर से. तुमने सुना होगा ?

महत्तरिका — हाँ, महाराज !

ओक्काक (महत्तरिका की ओर एकटक देखता है। पास आता है। दोनों हथेलियों में उसका चेहरा ऊपर उठाता है। धीरे-धीरे) कितनी सुन्दर हो तुम! ये मदभरी आँखें... (उँगली फेरते हुए)... ये रसीले होंठ... (भरपूर साँस लेता है।)...कामना के धीरे-धीरे धीरज की रेख को सुलगा कर राख कर दें—ऐसे दहकते अंग-प्रत्यंग ... बौराये हुए हाथी-सा संभाले न संभलता हो—ऐसा उन्मादी यौवन ... जो थकने न सुन्दर पा न, तो मर्यादा की लौह शृंखलाएँ कमलतन्तुओं की तरह छिन्न-भिन्न हो जायें... (विक्षिप्त सा हँसता है। पीछे हटते हुए) लेकिन तुम्हारा शील निश्चिन्त है, क्योंकि तुम मेरे पास हो...। इस धरती की किसी भी युवती को मुझसे कोई डर नहीं... जो मेरी आँखों को भाये, वह भी सुरक्षित है... जो मेरी बाँहों में समाये, वह भी सुरक्षित... (शैया की ओर देखते हुए) जो मेरी शैया पर आये, वह भी सुरक्षित... ((शैया की ओर बढ़ता है।) संसार-चक्र का यह एक और अकेला चक्र... अनजाना है मेरे लिए... साहित्य-ग्रन्थों के इतने सारे अंश... वात्स्यायन के इतने विवेचन... धर्मशास्त्र की वर्जनाएँ... ये बलात्कार... ये आत्मसमर्पण... ये चीरहरण... केवल एक उलझन हैं मेरे लिए, बस, एक पहेली...।

महत्तरिका (विह्वल-सी) महाराज! क्यों आप व्यर्थ में..?

ओक्काक कहने दो मुझे... यह लेने दो... (विराम। अगले संवाद में दो-तीन पंक्तियों के बाद मंच के बायें भाग में अंधकार छाने लगता है... महत्तरिका विलुप्त हो जाती है।) बचपन में ही माता-पिता का देहान्त... मैं गुरुकुल में था और अमात्य-परिषद मेरे नाम पर शासन चला रही थी। वयस्क होते ही राजधानी बुलाया गया। राज्याभिषेक... ब्याह की तैयारी... तभी ज्योतिषी ने बतलाया कि मेरे ग्रह बहुत प्रबल हैं और किसी भी राजदुहिता की कुंडली मुझसे नहीं मिल रही है—और जिससे मिल रही है, वह दरिद्र घर की एक कन्या है।... ब्याह निश्चित हो गया। ... तैयारी होने लगी। वह दिन पास आने लगा। ... तब मैं और नहीं छिपा सका। ...मैंने राजवैद्य से कहा कि मैं... कि मैं... (क्षणिक विराम) नग्न युवती की कल्पना करता हूँ... और मुझे कुछ नहीं होता। ... उन्होंने मेरी परीक्षा की। ... शायद यह कोई मनोवैज्ञानिक ग्रंथि थी...

शीलवती (गहरी सांस लेकर) पूरे चांद की रात है न...सुनो, तो मेरी यह माला निकाल दोगे ? ...चुभ रही है गले में ।

प्रतोष अच्छा करवट ले लो...!

वस्त्रों की सरसराहट । आभूषणों की झंकार ।

बोली, या जमा हुआ हिम, या बसती पवन - इनका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता शयनकक्ष के ऊपर ? नींद की अवधि पर, या लेटने के ढंग पर, या शैया की जगह पर, या (ओक्काक मुंह फेर कर पीछे हटने लगता है। उद्धत-सी सामने आ जाती है। तीव्र स्वर में) बोलो या ?

(उसे हटा कर आगे आ जाता है। भिंचे स्वर में) मैं नहीं जानता।

(स्थिर दृष्टि से देखती है। ठंडी भर्त्सना से) तुम चाहो, तो भी नहीं जान सकते लेकिन तुम्हारे साथ मैं भी इस जानकारी से वंचित रहूँ ? क्यों ? किस लिए ?

(तीव्र स्वर में) वैवाहिक बंधन की कुछ मर्यादा भी होती है।

(आवेश से) निभायी है मैंने और पाँच वर्ष तक मर्यादा निभाने में उतना संतोष नहीं मिला, जितनी तृप्ति इस एक रात में मिली है। बोलो किसे मानूँ ? किसको दूँ महत्त्व ?

(उसकी ओर देखती रहती है। एक ओर बढ़ती है, धीरे-धीरे) उसके एक ही स्पर्श से भड़क उठा यह लावा जो कितने सालों से इस शरीर में दबा हुआ था। किसको आँच का अनुभव होता था जब तो कहीं कुछ नहीं भाता था। बिना बात महत्तरिका पर झुंझलाती थी बेचारे चक्रवाक को आहार नहीं मिलता था, चित्रलेख फाड़-फाड़ कर फेंकती थी, इन रातों में वीणा के तार टूटते थे, बेचैन सी शैया पर करवटें बदलती थी (एक पग बढ़ाते हुए) और जान लो कि तुम्हारा मुँह नोच लेने का मन होता था (चूड़ियाँ और आभूषण खनखनाते हैं, तो कलाई की ओर देखती है। कुछ क्षणों बाद यों मुस्कराती है, जैसे कुछ याद आ रहा हो। हँस पड़ती है। अपने को संभालने की चेष्टा करती है। उमग से) बहुत अनुभवी है प्रद्योत.. जानता है कि कब, कहाँ, कैसे और क्या:. करना चाहिए।

(मरयि स्वर में) शीलवती !

(उसकी ओर देखती है। खिलखिला कर हँस पड़ती है।) क्या कहूँ। . .भरी गगरी की तरह छलकी-छलकी जा रही हूँ .. इतना सुख, इतनी सिहरन, इतना रोमांच. . (सीत्कारसहित) कल रात कितनी बड़ी क्रांति हुई है मेरे जीवन में . मेरे तन-मन का इतिहास ही बदल गया है... (आवेग से) मैं अपने अनुभव

शीलवती . (जैसे उसी अनुभूति में डूबी हुई हो।) आलिंगन की निकट ..चुम्बनो का ताप .दतचिह्नो के सीत्कार.. नखक्षिप्त सं सिहरन .

ओक्काक (मुंह फेर कर) बस बस.. !

शीलवती (मुस्कराती है।) क्यो ? ..सहन नही हो रहा है ?

ओक्काक (गवाक्ष तक आ जाता है। कुछ ठहर कर) अभी भी राजप्रा मे है तुम्हारे उपपति ?

शीलवती हैं और अभी रहेगे कुछ समय तक।

ओक्काक (मुड़ता है।) क्या मतलब ?

शीलवती (धीरे-धीरे) रात मैने एक ओर बहुत कुछ पाया, तो दूसरी ओर यह भी जाना कि अब तक कितना कुछ खोया है ! खोने मे से पाने का सतोष और पाने मे से खोने का आक्रो (विराम) . कितना सुख दे सकता था यह शरीर. लेकि मैने नही जाना वर्ष पर वर्ष बीतते गये वही प्रात काल उठना स्नान-ध्यान उद्यान की क्यारियाँ वीणा-वादन य चित्र-रचना पक्षियो को दाना-पानी किसी पुस्तक के पन्ने पलटना.. दोपहर-भर सोना सायकाल कोई सभा-समारोह कुछ सगीत-नर्तन मेरी दिन की दिनचर्या कभी नही बदली— क्योकि रात की आपबीती नही बदली .मुझे किसी ने बलात् सारी रात नही जगाया मैने नीद से बोझिल पलकें झपकाते हुए किसी से मनुहारें नही कीं मैने तकिये मे मुंह छुपाये पहरो गुपचुप बातें नहीं की (विराम) जब दो शरीर पास आते हैं, तो सम्मिलन का व्यक्तिगत-इतिहास बनता है—निकट आने की पूरी प्रक्रिया, अलग-अलग सोपानो पर एक-दूसरे की प्रतिक्रिया की जानकारी ..देने का आवेग लेने की व्याकुलता .. यह साझेदारी मेरे जीवन मे कभी नही आयी ऋतुएँ पर ऋतुएँ बदलती गयीं .ग्रीष्म आया, तो देह पर चदन पोत लिया...वर्षा आयी, तो श्वेत वस्त्र पहन लिये...शरद आया तो कानो मे नीलकमल, हेमन्त आया तो बालों मे काला अगरु, शिशिर आया तो मोटा कूर्पासक, बसत आया तो माल दुकूल.. लेकिन ऋतुओं का यह परिवर्तन क्या केवल इतना ही होता है ? यह कहाँ पति-पत्नी की रातों को नही छूता ? उस व्यक्तिगत इतिहास को ?. ठंडे जल मे भीगे पंख, या मेघों का घनघोर गर्जन, या धान की बालों की पक्तियाँ, या सारस की

(तीनों को ओर देखती है।) आप लोग स्थिति को दो टूक स्वीकार क्यों नहीं करते ? ससार दु खो का सागर है। कितनी भाग-दौड़ कितना छल-कपट कितना रक्तपात रात की वही तो कुछ घडियाँ है जिनमें आदमी अपने को भूल सकता है, थोड़ा-सा सुख पा सकता है। मैंने ऐसी कौन-सी अनहोनी बात कह दी, जो आप लोगो के चेहरे उतर गये ?

महामात्य लेकिन ससार में आचरण के भी कुछ नियम है। दो व्यक्तियों के बीच मर्यादा की एक सीमा होती है, जिसका उल्लघन किसी भी दृष्टि से ।

शीलवती (विद्रूप से) महामात्य ! इन खोखले शब्दों का जादू टूट चुका है अब । (महामात्य, राजपुरोहित, महाबलाधिकृत एव ओक्काक को ओर बारी-बारी से देखती है।) मर्यादा ! धर्म ! शील ! वैवाहिक बधन ! (सबकी ओर पीठ कर आगे आ जाती है।) सब मिथ्या ! सब आडबर ! सब पुस्तकीय ! (उद्धत-सी) लेकिन मुझे पुस्तक नही जीना अब । मुझे जीवन जीना है।

महामात्य क्या जीवन और पुस्तक का इतना गहरा विरोध होता है ?

शीलवती . कुछ ऐसे सौभाग्यशाली हो सकते है, जिनका नही होता जैसे महाबलाधिकृत का युद्ध-कौशल पुस्तक से जैसे राजपुरोहित का धर्माचारण जिवा से जैसे आपका अर्थशास्त्र या युद्धनीति से. (क्रोधपूर्वक) लेकिन मेरी ओर देखिये। मैं एक व्याहता स्त्री हूँ लेकिन मेरे जीवन का कामशास्त्र से क्या सामजस्य है ? . जिसने पाँच वर्षों तक यह नही जाना कि पुरुष के स्पर्श में वह कौन-सा सम्मोहन है, जो (महामात्य की ओर देखती है। व्यग्य से) क्या नेक परामर्श दिया था आपने मुझे कल ? मछली की आँख के उदाहरण के साथ ? तनिक दुहराइये उसे। (विराम। बलपूर्वक) राजमहिषी की आज्ञा है कि आप उसे दुहरायें।

महामात्य · (कुछ रुक कर) मैंने कहा था कि. ।

शीलवती : कि ?

महामात्य · केवल अपने लक्ष्य के बारे में सोचिये।

क्षणिक विराम।

शीलवती : जब आप अपनी पत्नी के साथ सोते हैं ?

ओक्काक : (घुटे स्वर में) शीलवती !

तीनों जाने को होते हैं।

शीलवती तनिक ठहरिये ! (तीनों ठिठक जाते हैं। मुस्कान सहित तीनों की ओर बारी-बारी से देखती है।) महामात्य ! राजपुरोहित ! महाबलाधिकृत ! . (धीरे-धीरे, समझाते हुए) आप लोगों को शायद अनुभव होगा अनिश्चय बहुत बेचैन करता है और प्रतीक्षा बड़ी यातना देती है। यह स्थिति तो और भी भयंकर है, क्योंकि अनिश्चय प्रतीक्षा भरा होगा और और प्रतीक्षा अनिश्चय भरी। . आप लोग राज्य के स्वामिभक्त कर्मचारी कहे जाते हैं तो ऐसे तनाव से आप लोगों को बचाना मेरा कर्तव्य है।

महामात्य मैं समझा नहीं।

शीलवती अमात्य-परिषद का निर्णय है कि वह मुझे तीन अवसर देगी ?

महामात्य जी हाँ, तीन।

शीलवती तो जाइये, घोषणा कर दीजिये कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद राजमहिषी शीलवती धर्मनटी बन कर राजप्रांगण में उतरेंगी।

छोटा-सा विराम।

राजपुरोहित : लेकिन कुछ दिनों प्रतीक्षा तो करें।

महाबलाधिकृत : अगर रात का कोई परिणाम हो तो. ।

शीलवती : (स्मित सहित) मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि रात का कोई परिणाम नहीं होगा। . मेरे उपपति ने मुझे एक निरोधक औषधि दे दी है ..और अगली बार भी दे देगा।

विराम।

महामात्य : (समझने के भाव से) ओह ..!

ओक्काक : (स्थिर दृष्टि से शीलवती की ओर देखता है। करुण मुस्कान से) राजमहिषी धर्मनटी बन कर गयी थीं, कामनटी बन कर लौटी हैं।

महाबलाधिकृत : (किंचित आक्रोश से) लेकिन यह तो आप लोगों की सरासर चाल है।

शीलवती : (मुस्करा कर) वैधानिक जाल में से निकलने की वैधानिक चाल.. (विराम। आत्मलिप्त-सी) लेकिन मैं कैसे एक सप्ताह तक प्रतीक्षा करूँगी ? . सात दिन . और सात रातें. . (चारों की ओर पीठ कर एक ओर बढ़ने लगती है।) सात बार सूर्य उगेगा और डूबेगा...सात बार चन्द्रमा निकलेगा और छिपेगा...

गान बार चकवा अलग होगा चकवी से.. (ओक्काक के प्र तनिक झुक कर तीनों कर्मचारियों का प्रस्थान।) साड ब कुमुदनी चन्द्रमा के बिना मुरझायेगी ' .। (मुड़ती है।)

ओक्काक यह वैधानिक रास्ता जब बन्द हो जायेगा, तब ?

शीलवती जब आवश्यकता होती है, तो नये रास्ते खुलने लगते हैं।

ओक्काक अर्थात अब तुम किसी मर्यादा का पालन नहीं करोगी ?

शीलवती : (आगे बढ़ जाती है।) कितनी युवतियां हैं, जो ब्याह से पहले ही कुमारी नहीं रहतीं और मैं ब्याहता होकर भी ब्रह्मचारिणी थी लेकिन कब तक ? . मैं एक मामूली स्त्री हूं। जब शरीर के माध्यम से जीती हूं, तो शरीर की मांगों को कैसे नकार सकती हूं ?

ओक्काक · (तिरस्कार से) तुम यहां तक जा सकती हो ?...अपने स्वार्थ के लिए ।

शीलवती (स्थिर दृष्टि से देखती है।) और तुम कितने परमार्थी हो, जो बिना सामर्थ्य के ब्याह के जैसा जघन्य पाप कर सकते हो ?

राजवैद्य ने कहा था कि जब कामना की पूरी ऊष्मा के साथ पत्नी तुम्हारा आह्वान करेगी, तो उस मनोवैज्ञानिक क्षण में अपने-आप यानी मैं तुम्हारे लिए केवल जड़ी-बूटी थी ? केवल एक उपचार ? तुमने यह नहीं सोचा कि अगर यह चिकित्सा बेकार गयी, तो इस जीवित औषधि पर क्या बीतेगी ? .(इधर-उधर देखती है। मंच की प्रकाश-व्यवस्था धीरे-धीरे तीन आलोक-वृत्तों में बदलने लगती है जो शीलवती, ओक्काक एवं शैया पर केन्द्रित हैं।) यह शयनकक्ष साक्षी है मेरी पीड़ा का ..ये भित्तियां और गवाक्ष यह मुक्तावलाप (छोटा-सा विराम) यह शैया. .तुम मेरे शरीर से ताप लेना प्रारंभ करते थे. .नग्न नारीत्व से अपने पुरुषत्व को जाग्रत करना चाहते थे—आलिंगनों से, चुंबनों से, स्पर्शों और नख-चिह्नों से...मेरी पूरी चेतना प्रत्युत्तर देती थी मेरी सांसें अवरुद्ध, मेरी धड़कनें तीव्र...मेरे होंठों पर सीत्कार मेरे अंग-प्रत्यंग में कंपकंपाहट की तरंगें— मैं पूरी तरह तैयार पके फल की तरह टूट पड़ने को, उमड़ते ज्वार की तरह बांध तोड़ देने को, भरे मेघों की तरह बरस पड़ने को और प्यासी धरती की तरह एक-एक बूंद अपने में समा लेने को उस आशा में मैं एक-चौथाई दूरी तय करती और मुड़ कर देखती

तो तुम वहीं खड़े थे—ठंडे, निस्तेज तब मुझे फिर लौटना पड़ता तुमने कभी जाना है रीते-हाथों वापसी की उस यातना को ? उत्तेजना की उस व्यर्थता और उन्माद की उस निरर्थकता को ? उष्णता के बाद शीत, थरथराहट के बाद स्थिरता, कंप के बाद सहजता बिना किसी उपलब्धि के, बिना किसी प्राप्य के बिना किसी तृप्ति के (एकटक देखती है।) बोलो कौन है स्वार्थी ? तुम कि मैं ?

क्काक (पीठ फेर लेता है। सिर झुकाये) तो तुम मन ही मन घृणा करती रही हो मुझसे अब तक ?

लवती . प्रारंभ में करती थी, पर बाद में नहीं। तुम्हारे व्यक्तित्व के दूसरे पक्ष हैं, जो मुझे भाते हैं। मेरी पूरी सहानुभूति है तुम्हारे साथ, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि (अटक जाती है। निकट आती है।) जब आत्मसंतोष की अंधी दौड़ हो—व्यक्तिगत सुख की खोज ता जीवन बहुत जटिल होता है, आवश्यक और उसकी माँगें भी उतनी ही उलझी हुई पूर्ति के लिए एक से अधिक व्यक्ति चाहिए किसी से समाज में एक स्थान, किसी से भौतिक सुविधाएँ, किसी से भावना की तृप्ति किसी से शरीर का सुख !

करुण मुस्कान से ओक्काक की ओर देखती है। बाएँ द्वार से चली जाती है। ओक्काक मुड़ता है, द्वार की ओर देखता है। तीसरा प्रकाश-वृत्त बुझने लगता है। ओक्काक फिर मुड़ता है, शैया की ओर देखता है। नेपथ्य में नगाड़े की ध्वनि। फिर उद्घोषक का स्वर—'मल्ल राज्य के हर नागरिक को—सूचना दी जाती है – कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद, पूर्णमासी की संध्या को —राजमहिषी शीलवती धर्मनटी बन कर— राजप्रांगण में उतरेंगी। मल्लराज्य के हर नागरिक को -प्रत्याशी बन कर पधारने का आमंत्रण है। राजमहिषी शीलवती -अपनी इच्छा के अनुसार -- किसी भी नागरिक को -एक रात के लिए—सूर्य की अंतिम किरण से— सूर्य की पहली किरण तक— उपपति के रूप में चुनेंगी।' अंधकार।